मजलिस शामे ग़रीबाँ

ज़ाकिरे शामे ग़रीबाँ उमदतुल उलमा आयतुल्लाह सै० कल्बे हुसैन साहब क़िब्ला ताबा सराह

जाहिल और बदबातिन इन्सानों का ख़याल है कि इमाम हुसैन[अ०] करबला में मुल्क लेने और सलतनत हासिल करने की ग़रज़ से तशरीफ़ लाये थे जेहाद करके फ़तह हासिल करना आपकी तमन्ना थी। लेकिन यह ग़लत और महेज़ बेबुनियाद इल्ज़ाम है। अगर आपकी नज़र अपने उस मज़लूम इमाम की पूरी सवानेह उमरी और तमाम हालाते ज़िन्दगी पर हो तो आप मेरी तसदीक़ करेंगे कि इमाम हुसैन[अ०] की नियत जेहाद की होती और आपके जेहाद की ग़रज़ फ़तह होती तो हमारा इमाम इतना बेअसर न था कि वह लश्कर जमा न कर सकता था। दो चार हज़ार आदमी मदीने से दस बीस हज़ार आदमी एय्यामे हज में मक्का से यमन से बसरा से मुख़तलिफ़ क़बाएले अरब से तीस चालीस हज़ार का लश्कर जमा कर लेना इमाम हुसैन[अ०] के वास्ते बड़ी बात न थी। हज़रत के तलब के बग़ैर सिर्फ़ रास्ते ही में हज़ार आदमी से ज़ायद आपके हमराह हो गये थे तो अगर लश्कर जमा करने की कोशिश करते तो कितने आपके साथ होते मगर हज़रत की ये ग़रज़ थी ही नहीं। न मदीने में लश्कर जमा किया, न मक्का में एलाने जेहाद किया, न शहरों-शहरों से लोगों को बुलाने की कोशिश की बल्कि बरख़िलाफ़ इसके जो लोग इधर-उधर जमा हो गये थे उनको भी अपनी ग़रज़ बता-बता के अपनी शहादत की ख़बर सुना-सुना के अलग करना शुरु किया और सिर्फ़ उनही लोगों को साथ रखने की कोशिश की बल्कि ख़त लिखकर बुलाया जिनसे बहत्तर शहीदों की तादाद पूरी होती है जो अपने ईमान में कामिल हों कि शहादत की ख़बर सुन कर दीन न छोड़ें, बल्कि और सिबाते क़दम में इज़ाफ़ा हो जाए। कुछ लोग मक्का से चुने मगर वही जो बूढ़े भी हों तो हाथ न काँपें। कुछ लोग रास्ते से लिये मगर ऐसे जो शहादत की ख़ुशख़बरी से झूमने लगें। हाँ औरतें भी साथ लीं मगर वही जो वक़्ते आख़िर अपने अपने दिल के टुकड़ों का सर ज़ानू पर लें मगर चेहरे से ख़ून पोंछें और कहें ऐ नूरे नज़र! तुम ने हमको फ़ातिमा ज़हरा[स०] से सुरख़ुरू कर दिया, रोएं तो मगर बेसब्र न हों सीना ज़नी करें मगर बददुआ न करें, असीर हो जाएं मगर हक़ का एलान करती रहें, हाथों में रस्सियाँ तो बंधें मगर तबलीग़े ईमान से ज़बान न रुके, क़ैदख़ाने में हों मगर इस्लाम को आज़ाद करती रहें। देख चुके थे हुसैन[अ०] कि नाना ने जेहाद किया मगर मुनाफ़िक़ों की शिद्दत न रुकी। अली[अ०] दुश्मनाने इस्लाम से लड़े मगर मुनाफ़िक़ों ने एतेराज़ कर ही दिया कि अली[अ०] सलतनत लेने के वास्ते लड़े। अब ऐ हुसैन[अ०]! तुम ने अन्दाज़े जेहाद यूँ बदल दिया कि अगर कोई बदबातिन कह भी दे कि हुसैन[अ०] सलतनत के वास्ते लड़े तो मुसलमान नहीं, काफिर दोस्त नहीं, दुश्मन मुवाफ़िक़ नहीं, मुख़ालिफ़ भी ज़बान पकड़ लेंगे कि हरगिज़ नहीं हुसैन[अ०] सलतनत के वास्ते नहीं लड़े। दीन के वास्ते लड़े, ईमान के वास्ते लड़े। ख़ुदा के वास्ते लड़े बल्कि इन्सानियत की हिमायत के वास्ते लड़े। अफसोस वक़्त तंग है मेरी कुव्वत ख़त्म है। आवाज़ साथ छोड़ चुकी है जो कहना चाहता हूँ वह एक समन्दर है। क्योंकर कूज़े में बन्द करूँ। क्योंकर समन्दर को नुक़ता और दरिया को क़तरा बनाके सामईन तक पहुँचाऊँ। मेरा दावा है कि इन्सानियत और इस्लाम दो लफ़्ज़ें बज़ाहिर अलग हैं। मगर दरहक़ीक़त एक हैं। तालीमे इन्सानियत और तबलीग़े इस्लाम दो जुमले अलग हैं मगर माने एक हैं। अहकामे मज़हब और हुस्ने अख़लाक़ दो इबारतें जुदा-जुदा हैं। मगर मतलब एक ही है मोमिन कामिल और किरदार की बुलन्दियाँ बज़ाहिर जुदा हैं मगर दरअस्ल हैं एक ही।

इन्सान और हैवान आदमी और जानवर हैं,

सूरत का फ़र्क़ कोई फ़र्क़ नहीं। नाक नक़्शे का बल कोई बल नहीं। क्या हज़ारों क़िस्म के जानवरों में हर जानवर की सूरत अलग नहीं? मगर इस सूरत के फ़र्क़ ने किसी एक जानवर को भी हैवानियत से जुदा नहीं किया। बड़े से बड़े फ़र्क के बाद भी सब जानवर ही रहे। तो इन्सान की सूरत के फ़र्क़ ने इन्सान को हैवान से जुदा नहीं किया। ख़्वाहिशात व जज़्बात और एहसासात के फ़र्क ने भी इन्सान को जानवर से अलग नहीं किया। खाना पीना जिस तरह इन्सान में है, उसी तरह जानवर में। मुहब्बत व अदावत जिस तरह इन्सान में है, उसी तरह जानवर में भी। तवालुद व तनासुल (Reproduction) जिस तरह इन्सान में है, उसी तरह जानवर में। मगर अक़्ल और सिर्फ़ अक़्ल है जो इन्सान में है और जानवर में नहीं।

यह तो नामुमकिन है कि इन्सान अपनी ऐसी ख़्वाहिश से काम न ले जो जानवरों में भी मौजूद है। कौन है जो खाना पीना, सोना जागना, तवालुद व तनासुल, ग़ैज़ व ग़ज़ब, मुहब्बत व अदावत से दस्तबरदार हो जाए? नामुमकिन और बिलकुल नामुमकिन है।

इन तमाम क़ुव्वतों से इन्सान काम लेगा और ज़रूर काम लेगा। तो फिर इन्सान और हैवान में क्या फ़र्क रहेगा? मैं आपसे अर्ज़ करूँ कि फ़र्क़ बहुत नाज़ुक है और सिर्फ़ ये कि जब हैवान इन्हीं क़ुव्वतों से काम लेगा, तो इनका बन्दा बन के काम न बनेगा। और इन्सान जब इन क़ुव्वतों से काम लेगा तो इनका बन्दा बन कर काम न लेगा। जब फ़र्क निकल आया तो आपको मानना पड़ेगा कि जिस इन्सान ने अक़्ल होने के बाद अक़्ल से काम न लिया। और जज़्बात व ख़्वाहिशात का बन्दा बन गया, वह जानवर से भी बदतर है और जो इन्सान अपने किसी जज़्बे और ख़्वाहिश से बन्दा न था बल्कि सिर्फ़ अक़्ल का बन्दा रहा। और तमाम ख़्वाहिशात को अक़्ल की ग़ुलामी में दे दिया, वह ऐन इन्सान है। और इस्लाम यही सिखाता है कि अपनी हर ख़्वाहिश को अक़्ल की ग़ुलामी में क्योंकर दिया जाए। लेहाज़ा तालीमे इस्लाम और तालीमे इन्सानियत बिल्कुल एक ही चीज़ हो गई। तो जिस हुसैन[अ०] ने इस्लाम को बचाया, उसने इन्सानियत को बचाया। जिस हुसैन[अ०] ने बेदीनी को मिटाया उसने हैवानियत को मिटाया, ज़ुल्म व जौर को मिटाया। आप याद रखिये कि अगर इमाम हुसैन[अ०] करबला में तन्हा होते तो कहने में बात आती कि करोड़ों इन्सानों में सिर्फ़ एक का इस मंज़िल पर पहुँच जाना ख़ुद ही इसकी दलील है कि हर इंसान इसकी दलील नहीं बन सकता। इसलिए मज़लूम इमाम ने अपनी राहे अमल में सौ डेढ़ सौ इन्सानों को शरीक कर लिया कि अब तो मेरा नक़्शेक़दम बेनज़ीर नहीं, मेरी उम्र सत्तावन अटठावन साल है, देख (लो) कि मुझ से ज़ायद सिनरसीदा इन्सान मेरे नक़्शेक़दम पर चल रहे हैं या नहीं। मुमकिन है कि तुम इस जज़्बए फ़िदाकारी को बनी हाशिम की मख़सूस सनअत क़रार दो। तो देख लो। मेरे साथ हर क़ौम व क़बीले का इन्सान है या नहीं। अगर कमसिन बच्चे जवानों के नक़्शेक़दम पर क़दम रखने को तैयार न हों। तो देख लो मेरे साथ बच्चे हैं या नहीं, अगर सिन्फ़े नाज़ुक मर्दों के अन्दाज़ अपने वास्ते नामुमकिन समझे तो देख लो कि मेरे साथ औरतें हैं या नहीं। मेरी तरह शाहराहे इमामत पर तुम नहीं चल सकते, तो मुस्लिम बिन औसजा को देखो, हबीब इब्ने मज़ाहिर को देखो, मेरे अब्बास[अ०] पर नज़र करो। अली अकबर से सबक़ लो। उनसे भी ज़ायद कमसिन हो तो मेरे क़ासिम को देखो। तलवार उठाने के इतनी भी क़ुदरत नहीं तो मेरे भाई की यादगार अब्दुल्लाह बिन हसन की तरह तलवार के नीचे हाथ तो फैला दो। अगर ये भी न हो सके तो असग़र की तरह मुसकुरा के तीर के सामने गला तो पेश कर दो। औरतें तलवार नहीं उठा सकतीं तो हाथों में रस्सियाँ तो हो सकती हैं, क़ैद की तारीक रातें तो सब्र से गुज़ार सकती हैं। अगर कोई कहे कि हम तो नौ मुस्लिम हैं, नस्ल दर नस्ल के ख़ुदा परस्तों की क़ुव्वत व सिबात कहाँ से लाएं तो मेरे हुर को देखो दो ही क़दम में सीरत बदल गयी। आदत बदल गयी, जहन्नम से जन्नत बदल गयी। हैवानियत से इन्सानियत बदल गयी। अली[अ०] की तरह शहीद होना हुसैन[अ०] से भी मुमकिन था। हसन[अ०] की तरह ज़हर पी लेना हुसैन के वास्ते आसान था मगर कहने में बात आती है कि इल्म व यक़ीन शहादत के बाद हुक्मे ख़ुदा

की इताअत में तलवार के नीचे सर झुका देना ज़हर का प्याला पी लेना इमाम ही का काम है, हमारे इम्कान में नहीं। लेहाज़ा हुसैन[अ०] ने डेढ़ सौ ऐसे मर्दों और औरतों को नमून-ए-अमल बना दिया। जिनमें से कोई एक भी इमाम न था। ये सब के सब कुल के कुल इन्सानियत की तालीम देने के वास्ते हैवानियत के मुक़ाबले में सीना तान के खड़े हुए, ज़ुल्म के मुक़ाबले में मज़लूमियत की मुकम्मल तस्वीर बन गये। दुनिया परस्ती के मुक़ाबले में दीनदारी के जलवे पेश करने को आइन-ए-जमाल बन गये। यज़ीद उधर था, हुसैन[अ०] इधर थे। शैतान उधर था, ख़ुदा इधर था। कुफ़्र उधर था, इस्लाम इधर था। बेदीनी वहाँ थी, ईमान यहाँ था। ज़ुल्म व जौर उधर था, अद्ल व इन्साफ़ इधर था। नफ़्स परस्ती उधर थी, हक़ परस्ती इधर थी। कसरत उस तरफ़ थी, क़िल्लत इस तरफ थी। फ़तह पर नाज़ वहाँ था, शहादत पर मसर्रत यहाँ थी। हैवानियत की मुकम्मल तस्वीर वह थे, इन्सानियत का मुकम्मल नमूना ये थे। इसी इन्सानियत व हैवानियत का फ़र्क़ था कि यज़ीद वालों का हर फेल क़ाबिले मज़म्मत था और हुसैन[अ०] वालों का हर अमल क़ाबिले मदह था। मैं अर्ज़ कर चुका कि ख़्वाहिशात नफ़्सानी को अक़्ल पर ग़ालिब कर देना हैवानियत है और तमाम ख़्वाहिशात को अक़्ल पर ग़ालिब रखना ऐन इन्सानियत है। इसी कुल्लिया के दो ज़बरदस्त आइने कर्बला के मैदान में मुक़ाबले पर थे। प्यास में हर अच्छा और बुरा पानी पी लेना ऐन हैवानियत है और अपना पानी हुर के लश्कर को पिला देना ऐन इन्सानियत है। दूसरों पर पानी बन्द करके नहर की बहती मौजों से सैर होना हैवानियत है और क़ुदरत होने के बाद भी प्यास से ज़बान चबाना ऐन इन्सानियत थी। बड़े से बड़े ज़बरदस्त शेर को भी तीन चार दिन पानी न दीजिये तो वह आपके सामने सरे इताअत झुका देगा। यह है हैवानियत, मगर तीन दिन की प्यास बर्दाश्त करके तेवर पर बल न आना, यह है इन्सानियत। न मानिये कि पानी इमाम के क़ब्ज़े में था, जब चाहते ज़ोरे इमामत से निकाल लेते। तो हुसैन[अ०] के क़ब्ज़े में यज़ीद की बैअत व इताअत तो थी, मगर वह जानवर है जो भूख प्यास से बेचैन होकर सरे नियाज़ झुका देता है, मगर ये थी ऐन इन्सानियत, तीन दिन की भूख और प्यास में ज़ोर ईमान वही रहा और हैवानियत के सामने सर न झुकाया।

क्या हुसैनी लश्कर वालों ने यज़ीद वालों को ज़ख़्मी नहीं किया। क़त्ल नहीं किया? जी हाँ इधर तो बहत्तर ही क़त्ल हुए और उधर हज़ारों मरे। मगर इसके बाद ये मज़लूम, वह ज़ालिम। वह जहन्नम में, ये जन्नत में। वह क़ाबिले मज़म्मत, यह लायक़े मदह। इनके मुर्दे हंस देने के क़ाबिल, उनकी लाशें रो देने के लायक़। ये फ़र्क़ क्यों? सिर्फ़ इसलिए कि किसी बे ख़ता इन्सान का क़त्ल जुर्म है और किसी मूज़ी जानवर का क़त्ल जुर्म नहीं। इधर जितने शहीद हुए वह इन्सान थे और उधर जितने क़त्ल हुए वह सूरत में जानवर थे और वह भी अज़ियत देने वाले। वह ज़ुल्म की हिमायत में मरे, ये मज़लूम कि हिमायत में शहीद हुए। उनका क़त्ल होना ऐन बेअक़ली था, इनका शहीद होना ऐन अक़्ल, ऐन ईमान था। ख़ुदा की राह में फ़िदाकारी था, सरफ़रोशी था और इस सरफ़रोशी में जवानों के एक पहलू में बुढढे भी थे और दूसरे पहले में बच्चे थे और पसेपुश्त औरतें थीं, तपती हुई ज़मीन थी, लरज़ती हुई फ़िज़ा थी। ख़ाक बरसरे फ़लक था, सोज़िशे ग़म में जलता हुआ आफ़ताब था, अंगुश्तबदन्दाँ मलक थे। ख़ुदा को अपनी क़ुदरत पर नाज़, बहत्तर को अपने इमाम पर नाज़। दुश्मन को हैवानियत पर नाज़ और हुसैन[अ०] को इन्सानियत पर नाज़। वह तैयार कि आज ज़ुल्म की कोई हद उठ न रहे और हुसैन[अ०] तैयार कि सब्र की कोई मंज़िल झूट न जाय। सुब्हे आशूर ताले हुई। नमाज़ के मुसल्ले बिछ के उठे। बहादरों ने दरगाहे बारी में नमाज़ के वास्ते हाथ उठाये। शहादत की तमन्ना, सब्र की तमन्ना, सिबाते क़दम की आरज़ू ईमान पर बाक़ी रहने की दुआएं करके जो हाथ हटे तो तलवारों के क़ब्ज़ों की तरफ। बुढढों ने तीरों पर सहारा किया। बच्चे तीरों से खेलने लगे। ख़ून बहा तो हिम्मत बढ़ी। ज़ख़्म खाए तो मुस्कुरा दिये। सर कटे तो सुबुक बार हुए। लाशें गिरीं, तो आराम आया। साथी न रहे तो अज़ीज़ बढ़े, चचा की औलाद, भाई के बच्चे, अब्बास के भाई। सब ही ने इम्तिहाने वफ़ा दिया।

आख़िर अलमदारे हुसैनअ० बढ़ा। पाँच हज़ार पर हमला किया। सफ़ें तोड़कर फ़ुरात पर क़ब्ज़ा किया। मश्क भरी, पानी न पिया। हाथ कटे तो अलम गिरा। गुर्ज़ पड़ा तो संभल न सके। आख़िर भाई को आवाज़ दी। हुसैनअ० ने सर ज़ानू पर लिया। भाई ने भाई को रुख़सत किया। ज़ख़्मों की इतनी कसरत कि लाश भी हुसैन उठा न सके। अब नूरेनिगाह की बारी थी। अटठारह बरस का सिन, भरपूर जवानी, माँ की तमन्ना, फूफी की गोद का पला, बाप के दिल का टुकड़ा। बेहद हसीन व बेइन्तेहा ख़ूबसूरत, शबीहे रसूल दस्ते अदब बाँधकर आगे बढ़ा। बेटे को हुसैनअ० ने निगाहे हस्रत से देखा, दिल तड़पा मगर संभले, गले से लगाकर प्यार किया, मरने की इजाज़त दी। जवान फ़रज़न्द घोड़ा बढ़ाके चला और ज़ईफ़ बाप दिल संभाले पीछे-पीछे चला। अली अकबर ने मुड़कर देखाः ''बाबा आप क्यों ज़हमत कर रहे हैं?'' इमाम ने जवाब दियाः ''पार-ए-जिगर मैं रोकता नहीं। जाओ जाओ ख़ुदा तुमको शहादत मुबारक करे। मगर नूरे नज़र जब तक मुमकिन हो मुँह फेर-फेर कर देखते रहो कि मैं आख़िरी ज़ियारत करता रहूँ''।

ये सब्र की आख़िरी मंज़िल थी कि जवान बेटे ने आवाज़ दीः ''बाबा आख़िरी सलाम लीजिये।'' और बाप तड़प के मैय्यत पर आया, झुक के बच्चे का मुँह चूमा। काँपते हाथों से लाश उठायी। जब ये मंज़िल भी तमाम हुई, तो ख़ेमें में आके असग़र को लिया। छः महीने का बच्चा गोद में और हुसैनअ० के दिल की तमन्ना कि आख़िरी हदिया भी बारगाहे ख़ुदा में पेश करूँ।

दुनिया हैरान है कि इस बच्चे को मक़तल में क्यों लाए मगर इसलिए लाए कि दुश्मन के ज़ुल्म की इन्तेहा खुले। इसलिए लाए कि हर साहेबे औलाद तड़प उठे। इसलिए लाए कि तमाम दुनिया देख ले कि हुसैनअ० की मजबूरियाँ किस हद पर थीं। जो लड़किया हुसैनअ० के साथ थीं, उनमें कोई तीन बरस से कमसिन न थी जो बच्चे ख़ेमों में बच गए वह तीन बरस से ज़ायद भी न थे। इतने बच्चे थोड़ी ही देर सही मगर पैदल चल तो सकते हैं, महमल कजावे में बैठ तो सकते हैं। मगर छः माह का बच्चा गोद के बग़ैर क्योंकर रहे। हुसैनअ० तो जानते थे कि मेरे बाद औरतों के हाथ बंधेंगे। कौन होगा जो अली असग़र को गोद में लेगा? इसलिए आग़ोशे लहद में लिटाया कि मेरी जान इसी गहवारे में आराम करे। हदिया मुख़्तसर था मगर पेश करने का अन्दाज़ सख़्त था। बच्चे को संभालना आसान था मगर दिल संभालना मुश्किल था। मगर वाह रे हुसैनअ०! वाह!! दुनिया काँपी मगर आपका हाथ न काँपा, ज़मीन लरज़ी मगर इस मज़लूम के क़दम न लरज़े। तीर के मुक़ाबले से न बच्चे ने मुँह फेरा, न हुसैनअ० ने। बच्चे ने मुस्कुरा के तीर खाया और बड़े इत्मिनान से हुसैनअ० ने असग़र के गले से तीर निकाला। बच्चे ने मुस्कुरा के बाप को देखा, गोया मतलब ये था कि बाबा ख़ुदा का शुक्र है कि मैं आपकी तरह सब्र की राहों से गुज़र गया। हुसैनअ० ने बच्चे का ख़ून चेहरे पर मला कि मेरी शहादत का ग़ाज़ा-ए-हसीन इस बच्चे का ख़ून है जिसने मुझको मेरे अल्लाह के सामने सुरख़ुरु किया। अब तमाम नज़रें गुज़र चुकीं थीं। बस हुसैनअ० बाक़ी थे। या एक बीमार था, कुछ छोटी-छोटी बच्चियाँ थीं। या वह मजबूर बेकस सैयदानियाँ थीं। रुख़सते आख़िर को इमाम ख़ेमे में आए, मगर सीने से असग़र की मैयत लिपटाये हुए-

ले चले सीने से लिपटाकर हुसैनअ० असग़र की लाश
और प्यारा हो गया ये फूल मुरझाने के बाद

बेकस माँ ने बच्चे का आख़िरी दीदार देखा। बहते हुए आँसू रोके, ख़ेमे का पर्दा पकड़कर दिल संभाला कहा तो बस इतना कहा कि हाए मेरा बच्चा। इस उम्र के तो बच्चे भी ज़बह नहीं किये जाते जिस सिन में तुझको ज़बह कर दिया गया। हमारे मज़लूम व बेकस इमाम ने मरने की तैयारी शुरु कर दी। फटे पुराने कपड़े बहन से माँग के पहने कि कोई जिस्म से उतार न ले जाए हसरत की निगाह से एक-एक को देखा। सब्र व सुकून की वसिय्यत की। अपनी तीन बरस की बच्ची सकीना को गोद में लिया, प्यार किया, बहन की आग़ोशे मुहब्बत में दिया, ''मेरी बहन इस बच्ची का ख़याल सबसे ज़्यादा करना। तसल्ली देना, दिलासा देना, अगर पानी मिल जाए तो सबसे पहले मेरी बच्ची को देना।'' ख़ेमे का पर्दा उठा। बहन ने रिकाब पकड़कर भाई को

घोड़े पर सवार किया और राहे खुदा का मुसाफ़िर मुस्कुराता हुआ मैदाने जंग में आया। तीर बढ़े कि सीने को बोसा दें। नेज़े झुके कि सलाम करें। तलवारें खिचीं कि इस्तेक़बाल करें। और मज़लूम इमाम ने बन्दे क़बा खोले कि आरज़ू न रहे। दो चार दस बीस नहीं एक हज़ार नौ सौ इक्कावन ज़ख़्म खाये और हुसैन[अ०] ज़मीन की तरह झुके, ज़मीन लरज़ी, आसमान काँपा, आँधियाँ उठीं, तारीकी फैली। मेरा दिल कहता है कि बिस्मिल्लाह कह के नाना बढ़े। बाप ने हुसैन[अ०] का बाज़ू संभाला। माँ गोदी फैला के बैठी कि मेरे बच्चे आ मैं अपने काँपते ज़ानू पर सर रख लूँ। सर कटे तो मेरी गोद में कटे बहन घबरा के ख़ेमे से निकली मेरे बेकस भाई मैं अबा का साया तो कर लूँ। अगर मिल जाए तो पानी पिला दूँ। और फलक से आयत उतरीः ''या ऐय्यतुहन्नफ़्सुल मुत्मइन्नह् इरजिई'' ऐ नफ़्से मुतमइन्ना ऐ जाने सब्रो सुकून, ऐ मेरे हुसैन[अ०]! इत्मिनान की मंज़िलों से गुज़र के सब्र की राहों से बुलन्द होकर मेरे तक़र्रुब की मंज़िल मे। वापस आ। फ़तह वह फ़ीरोज़ी का ताज तेरे लिए मेरी जन्नत तेरे लिए। सारी दुनिया तेरी फ़िदाई, दिलों पर क़ब्ज़ा तेरा। बस मेरे हुसैन[अ०] बस, मुसीबत की दुनिया ख़त्म हुई। अब ज़ुल्म व जौर की तमाम कोशिशें तेरे कारनामों को अपने सियाह दामन में ढांक नहीं सकतीं। मैं तुझ से राज़ी और तू मुझसे राज़ी। बल्कि तमाम दुनिया तुझ से राज़ी। हाँ यक़ीनन इस मज़लूम इमाम ने वह काम किया कि खुदा राज़ी, रसूल राज़ी, अली[अ०] व फ़ातिमा[अ०] राज़ी। यही नहीं बल्कि हुसैन[अ०] का अन्दाज़े शहादत वह था कि हर मोमिन व मुस्लिम राज़ी। हर दीन व मज़हब मद्दाह। हर ज़बान पे हुसैन[अ०] का नाम, हुसैन[अ०] की सीरत। हुसैन[अ०] का ईसार, हुसैन[अ०] का इत्तेहाद। हुसैन[अ०] की सियासत, हुसैन[अ०] की शुजाअत। हुसैन[अ०] की सरफ़रोशी ''वल्लाह कि ऐ हुसैन[अ०] कारे करदी'' ज़बाने हाल मेरा दिल और हर इंसाफ़ पसन्द का अक़ीदा कह रहा है कि जब आदम ने हुसैन[अ०] पर निगाह की होगी, गले लगाया होगा कि हुसैन[अ०] तुम ने मेरी नस्ल को मलक से बेहतर कर दिया। नूह[अ०] खुश कि तुमने इस्लाम की कश्ती पार लगाई, इब्राहीम राज़ी कि मेरी खुल्लत निभा गये, इस्माईल ममनूने एहसान कि ज़बीहे फ़ुरात तुमने शहादत का बार उठाके मुझे छुरी के नीचे से हटा लिया। जनाबे मूसा[अ०] मदहसरा कि तुमने ज़ुल्म का बेड़ा डुबो के छोड़ा। जनाब ईसा[अ०] मद्दाह कि हुसैन[अ०] तुमने मेरी जाँफ़िशानी परवान चढ़ा दी। हाशिम नाज़ाँ कि मेरे ख़ानदान को चारचाँद लगा दिये। खुद मुहम्मद मुस्तफ़ा[स०] गले से लगाए हुए कि तुम ने मेरा दीन ज़िन्दा कर दिया। अली सीने से लगाए हुए कि नूरे नज़र अदयान की राहें रौशन कर दीं। हसन[अ०] सा भाई ताजे इमामत पहनाते हुए मेरे क़ुव्वते बाज़ू तूने मेरी सुलह का नतीजा ज़ाहिर किया। और माँ जलती ज़मीन पर गोद फैलाए हुए कि आ मेरे बच्चे आ मैंने तुझको इसी दिन के वास्ते पाला था। ये तो नाना थे, बाबा थे, अम्बिया थे, मुरसलीन थे, भाई थे, माँ थी। मगर दुनिया का वह कौन इंसान है कि हुसैन[अ०] की मदहो सना न कर रहा हो। सूफ़ियों का क़ौल है कि-

हक़्क़ा कि बिनाए ला इलाह अस्त हुसैन[अ०]

बहादरों का दिल क़वी कि हुसैन[अ०] सरदार बन जाएं तो शुजाअत के जौहर खुलें। फ़क़ीरों को तसल्ली कि हमारा फ़ाक़ा तो कोई चीज़ नहीं। दौलतमन्दों को दहशत कि हुसैन[अ०] ने सरमायेदारी को रौंद डाला। बादशाहों की निगाह दरबारे हुसैनी पर कि शाहज़ादा हो तो ऐसा हो। मसावात के बंदे सरे नियाज़ झुकाए हुए कि ग़ुलाम और आक़ा को बराबर करके दिखाया। सियासत वाले इस में महव कि यज़ीद की सलतनत क्योंकर मिटाई। उसूल के पाबन्द अंगुश्त बदन्दाँ कि हक़ को उभारे तो यूँ उभारे मगर बेटी की ज़बान पे दर्द व नौहा ''मातल फ़ख़ार, मातल जूदु वल करम'' अरे मेरा बाप नहीं मर गया, फ़ख़्र व शरअ् मर गया। जूदो करम मर गया। दीन व मज़हब को मौत आ गई। अब हम ग़रीब हो गए। बेकस हो गए, हमारा ख़बर लेने वाला न रहा। मैं अर्ज़ करता हूँ कि मेरी शहज़ादी! हुसैन[अ०] की जान! तुम न रोओ। तुम्हारे रोने से बाप का दिल दुखेगा। रूह बेचैन होगी, तुम्हारे बाप को दुनिया रो रही है, जानवर रो रहे हैं। इन्सान रो रहे हैं। हैवान रो रहे हैं। ज़मीन व आसमान ख़ून के आँसुओं से रो रहे हैं। मेरी शहज़ादी मत रो। दोस्त और दुश्मन रो रहे हैं।✡✡✡